International Journal of Social Science and Humanities
www.humanitiesjournals.com
Online ISSN: 2664-8628
Received: 10-07-2026, Accepted: 09-08-2026, Published: 24-08-2026
Volume 8, Issue 3, 2026, Page No. 77-80

'अथर्वा' में इतिहास और कल्पना का समन्वय

फरहीन [1], प्रभा पन्त [2]
[1] शोधार्थिनी, हिन्दी विभाग, एम. बी. राज. स्ना. महाविद्यालय, हल्द्वानी, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत
[2] प्रोफ़ेसर, शोधनिर्देशिका, विभागाध्यक्ष हिन्दी विभाग, एम. बी. राज. स्ना. महाविद्यालय, हल्द्वानी, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत
DOI: https://doi.org/10.66856/ijssh.2026.8.3.8124

सारांश
इतिहास और कल्पना का समन्वय साहित्य को सजीवता प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता रहा है। हिन्दी साहित्य में आदिकाल से अद्यतन काल तक इतिहास और कल्पना का समन्वय कर अनेक ग्रंथों की रचना होती रही; लगभग प्रत्येक विधा में इस प्रकार की रचनाएँ उपलब्ध हैं। हिन्दी साहित्य में इस प्रकार की रचनाओं को 'ऐतिहासिक रचना' की श्रेणी में रखा जाता है। कवि आनंद कुमार सिंह द्वारा रचित 'अथर्वा' इसी प्रकार की साहित्यिक रचना है, जिसमें इतिहास से पात्रों और घटनाओं को लेकर काव्य का ताना–बाना बुना गया है। 'अथर्वा' में कवि ने शनिलोक के सबसे बड़े चन्द्रमा 'टाइटन' पर जीवन और प्रलय की परिकल्पना की है। 'टाइटन' पर प्रलय के पश्चात् ऋषि अथर्वा द्वारा समस्त ज्ञान–विज्ञान को बचाकर पृथ्वी पर लाया जाता है, जो भारत की षोड्शी विद्या के रूप में प्रख्यात होती है। सहस्त्रों वर्ष पश्चात् भारत की इसी विद्या से विदेशी आकर्षित होते हैं, और इसे खोजने भारत आते हैं। इन विदेशी यात्रियों में फ़ाह्यान, ह्वेनसांग, अल–बिरूनी, इब्नबतूता, मार्कोपोलो इत्यादि प्रमुख थे। 'अथर्वा' में इन यात्रियों की भारत यात्रा और यहाँ रहकर खोजपूर्ण अध्ययन करने की घटनाओं को इतिहास और कल्पना के समन्वय से साहित्यिक रूप दिया गया है।

मूल शब्द: साहित्य, इतिहास, कल्पना, अथर्वा, टाइटन, बुद्ध, ह्वेनसांग, अल–बिरूनी, इब्नबतूता, इत्सिंग, मार्कोपोलो

इतिहास काल्पनिक नहीं होता और साहित्य इतिहास नहीं होता, किन्तु साहित्य में इतिहास और कल्पना दोनों का समन्वय हो सकता है। साहित्य पूर्णत: काल्पनिक तो हो सकता है, किन्तु पूर्णतः ऐतिहासिक नहीं हो सकता, इसलिए किसी साहित्यिक कृति से उसके पूर्णत: ऐतिहासिक होने की अपेक्षा करना न्यायसंगत नहीं है। 'अथवा' कवि आनंद कुमार सिंह द्वारा रचित साहित्यिक कृति है, जिसमें इतिहास और कल्पना का समन्वय मिलता है। 'अथर्वा' गद्य–पद्यमय मिश्रित रचना है, जिसे समकालीन साहित्यिक समाज में महाकाव्य के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। 'अथर्वा' की संरचना को कवि ने गद्य और पद्य दोनों की सहायता से बुना है। कवि ने गद्य के जाल में कविताओं को पुष्पों की भाँति टाँका है।

'अथर्वा' महाकाव्य में कवि ने श्तातनियम पर प्रलयश की परिकल्पना की है, जिसके अनुसार तातनियम पर प्रलय आ जाने के पश्चात् अथर्वा आदि सप्तार्षि किसी तरह ज्ञान–विज्ञान को बचाकर इस पृथ्वी पर ले आते हैं। इन ऋषियों के सहस्त्रों वर्षों के प्रयोग के पश्चात् पृथ्वी पर मानवीय चेतना विकसित होती है, और ज्ञान विज्ञान की परम्परा का प्रारम्भ होता है। इन ऋषियों द्वारा लाई गई विद्या भारत की षोड्शी विद्या के रूप में प्रसिद्ध हुई। भारत अपने धर्म, दर्शन और ज्ञान के बल पर विश्व गुरु बना, तथा भारतीय ज्ञान विज्ञान का अध्ययन करने विदेशों से अनेक यात्री समय–समय पर आते रहे। इन विदेशी यात्रियों में फ़ाह्यान, ह्वेनसांग, अल–बिरूनी, इब्नबतूता, इत्सिंग, मार्कोपोलो इत्यादि अत्यधिक प्रमुख और चर्चित विदेशी यात्री बने। 'अथर्वा' के गद्य–भाग को कवि ने गल्प कहा है, और गल्प में इन विदेशी यात्रियों द्वारा पाण्डुलिपि प्राप्त करने की कहानियाँ है, तथा काव्य भाग में प्राप्त पाण्डुलिपियों की विद्या है, जिसे अथर्वा ऋषि द्वारा पृथ्वी पर लाया गया था। 'अथर्वा' महाकाव्य का काव्य भाग पूर्णतः कवि की प्रतिभा पर आधारित है, किन्तु गल्पों में कवि ने इतिहास से पात्र लेकर, उनकी ऐतिहासिकता को बरकरार रखते हुए अपनी सूक्ष्म कल्पना से इन कहानियों को गढ़ा है। 'अथर्वा' में इतिहास को कल्पना के बारीक टाँको से इस प्रकार सिला गया है कि इतिहास और कल्पना दोनों अभिन्न हो गए हैं।

'अथर्वा' आदि ऋषियों द्वारा लाई गई इन षोड्शी विद्याओं में परा–अपरा दोनों प्रकार के ज्ञान थे, सृष्टि के आदि से अंत तक का ज्ञान एवं अनागत भविष्य के रहस्य इन पांडुलिपियों में छिपे हुए थे। कवि ने परिकल्पना की है कि विदेश से भारत आने वाले यात्री दरअसल इन पांडुलिपियों की खोज में ही भारत आए थे। कवि गल्प में इस बात को स्पष्ट करता है– "फाह्यान, ह्वेनसांग, इत्सिंग, अल बिरूनी, इब्नबतूता उसे ही ढूँढने निकले थे और तनिक बाद में वेनिस का यात्री मार्कोपोलो रेशम पथ पर उन्हीं की खोज में चला था। कोलम्बस और वास्कोडिगामा को भी उन्हीं के सपने आते थे।"1 कवि ने एक स्वप्न की डोर पर इन सभी यात्रियों का भारत आगमन दर्शाया है। चीन एक ऐसा देश था जिसने भारत से बौद्ध धर्म की दीक्षा ली थी, और भारत का शिष्यत्त्व स्वीकार किया था। चीन में बौद्ध धर्म के बीज कैसे बोये गए, इसके पीछे कवि ने एक स्वप्न को प्रेरणा रूप में प्रदर्शित किया है। एक स्वप्न जो अलग–अलग कालों में इन लोगों को दिखता रहा, और यह भारत आने के लिए मचल उठे। सर्वप्रथम यह स्वप्न चीन के सम्राट को अर्धरात्रि में उस समय दिखा जब बौद्ध धर्म का प्रचार पूरब से लेकर पश्चिम तक हो रहा था। चार सौ वर्ष पश्चात् फाह्यान को भी यहीं स्वप्न दिखता है, तत्पश्चात् तीन सौ वर्ष के बाद ह्वेनसांग को भी यहीं स्वप्न दिखा, और उसके बाद इन सभी विदेशी यात्रियों को भी यहीं स्वप्न दिखता है, जिससे लालायित होकर वे भारत की ओर खीचे चले आए।

ह्वेनसांग के सम्बन्ध में इतिहास में उल्लेख मिलता है, कि उसे किसी स्वप्न ने भारत आने के लिए प्रेरित किया था, किन्तु 'अथर्वा' महाकाव्य के अनुसार वह एक ही स्वप्न था जो ह्वेनसांग को, उसके पूर्व और पश्चात् के यात्रियों को दिखता रहा। कवि ने उस स्वप्न की कल्पना इस प्रकार की है–"चीनी राजभवन के दिव्य मण्डल से नीचे महदाकार पगोडा के महाप्रांगण में स्वर्णिम आभा वाला एक महापुरुष उतर रहा है। मस्तिष्क पर स्वर्ण किरीट, गले में वैजयन्ती की माला और उसके कानों में बड़े–बड़े कुण्डल लटक रहे थे। उसकी आँखें एकटक राजा को देख रही थी। राजा ने देखा कि वह देवपुरुष अपने बाँए हाथ में सोने की चमक वाली एक मंजूषा लिए हुए हैं और दाहिने हाथ की तर्जनी

से उसको अपनी ओर बुलाने का संकेत कर रहा है।"2 चूँकि सर्वप्रथम यह स्वप्न चीन के सम्राट को दिखा था, इसलिए इसे उन्हीं के अनुसार बुना गया है। इस स्वप्न का सम्बन्ध महात्मा बुद्ध और बौद्ध धर्म से था, जिन्होंने इन यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित किया।

इन यात्रियों में ह्वेनसांग सबसे प्रमुख यात्री था, जिसने अथर्वा ऋषि की उन पाण्डुलिपियों की खोज की, जिसे वह तातनियम से बचाकर हमारी पृथ्वी पर लाए थे। अथर्वा ऋषि द्वारा संकलित ज्ञान की सोलह पांडुलिपियाँ थी जिन्हें प्रमुख रूप से ह्वेनसांग नामक विदेशी यात्री ने ही खोजा। 'अथर्वा' में ह्वेनसांग के अतिरिक्त अल–बिरूनी, इब्नबतूता, मार्कोपोलो इत्यादि ऐतिहासिक पात्र अपने ही समय में, उन्हीं उद्देश्यों को लेकर उपस्थित हुए हैं, जैसा उनके संबंध में इतिहास में वर्णित है। इन विदेशी यात्रियों के संबंध में इतिहास में उल्लेख मिलता है, कि यह सभी विद्वान् थे, और इन्होंने भारत में रहकर भारतीय धर्म, दर्शन, और ज्ञान का गहन चिंतन–मनन किया। यह सभी अलग–अलग समय में भारत आए और यहाँ रहकर भारतीय ज्ञान–विज्ञान, और संस्कृति का अध्ययन किया।

इन विदेशी यात्रियों में सर्वप्रथम ह्वेनसांग ने भारत–यात्रा की, और लगभग पन्द्रह वर्षों तक वह भारत में रहकर बौद्ध धर्म का अध्ययन करता रहा। ऐतिहासिक पुस्तकों से ह्वेनसांग के संबंध में पता चलता है कि ह्वेनसांग चीन के समृद्ध परिवार से था। संभवतरू उसे ईश्वर की ओर से आध्यात्मिक बुद्धि प्राप्त हुई थी। वह बचपन से ही जिज्ञासु प्रवृत्ति का था, और उसने अल्पायु में ही धार्मिक ग्रंथो का अध्ययन कर लिया था। ह्वेनसांग सम्राट हर्षवर्धन के समय में लगभग 630 ई. के आसपास भारत आया था। 'अथर्वा' में भी ह्वेनसांग का समय यहीं दिखाया गया है। ह्वेनसांग ने भारत में रहकर अनेक तीर्थयात्राएँ की, उसने कन्नौज, प्रयाग, अमरावती, नासिक, अजंता, गुवाहाटी, असम, अयोध्या, साकेत, कौशाम्बी, लुम्बिनी, कुशीनगर इत्यादि स्थानों की यात्राएँ की थी। उसकी यात्राओं का प्रमुख उद्देश्य बौद्ध धर्म का चिंतन करना ही था, किन्तु 'अथर्वा' के अनुसार उसका उद्देश्य केवल इतना न रहकर, और विस्तृत दिखाया गया है। वह अनंत ज्ञान की खोज में इन स्थलों पर जाता है, और पाण्डुलिपियाँ प्राप्त करता है।

ह्वेनसांग को तक्षशिला में एक पाण्डुलिपि प्राप्त होती है, जिसको समझना उसे अपनी बुद्धि से परे की बात लगती थी, किन्तु एक दिन वह महात्मा बुद्ध की जन्मस्थली कपिलवस्तु पहुँचता है, और वहाँ एक दिव्य अनुभूति का अनुभव करता है। कपिलवस्तु से तीन मील दूर जब वह लुम्बिनीकानन आता है, तब वहाँ मायादेवी के मंदिर में प्रवेश करते ही वह दिव्य अनुभूति उसे स्पर्श करती है। उसे अनुभूत होता है कि वह स्वयं ऋषि वसिष्ठ है, और उसके समक्ष भगवान बुद्ध की माता महामाया प्रसव पीड़ा में कराह रही है, और वहीं पास में हिरण्यगर्भ के भीतर महाबुद्धों में संवाद चल रहा हैं। कवि ने अपनी इस कल्पना को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है– "वहाँ जीर्ण भवन के परिसर में उसने मायादेवी के मन्दिर की सीढ़ियों पर शिर नवा कर प्रणाम किया। ज्यों ही उसने मन्दिर की देहरी को ललाट से स्पर्श किया उसके भीतर विद्युत की कौंध–सी उठी; एक चौतन्य तरंगमाला ने जैसे उसे आपादमस्तष्क छू दिया। उसे रोमांच हो आया और वह बेसुध होकर गिर पड़ा।३३उसे लगा जैसे वह वसिष्ठ मुनि है जो नीलाचल पर्वत पर साधना कर रहा है। फिर कोई चौतन्य नीलज्योति उसे एक विशाल गर्भ में ले गयी। वहाँ पर चौतन्य लपट में महामाया प्रसवपीड़ा से कराह रही थी। उस लपट में उसने 'तथागतगर्भ' की शान्त वत्सल ज्वाला को देखा। वह ज्वाला स्वर्ण के विशाल अण्डे में बढ़कर फैल गई जिसके भीतर उसने महाबुद्धो को बीजरूप में संवाद करते हुए देखा। यह संभवत: विशाल हिरण्यगर्भ था"3 इस घटना के पश्चात् ह्वेनसांग को उस पाण्डुलिपि का ज्ञान प्राप्त हो जाता हैं, जो बुद्ध से पूर्व के दार्शनिक अथर्वा आदि ने संकलित किया था। ह्वेनसांग इस पांडुलिपि का नाम 'हिरण्यगर्भ' रखता है, जिससे पुराणों में ब्रह्मांड की सृष्टि बताई गई है।

यह ऐतिहासिक तथ्य है कि ह्वेनसांग जब भारत आया तब उसके देश चीन का तुर्को के साथ युद्ध चल रहा था, और उस समय वहाँ यात्राएँ निषेद्ध थी। ह्वेनसांग उस निषेद्धाज्ञा में ही जोखिम उठाकर भारत की ओर प्रस्थान करता है। ह्वेनसांग के सामने उस समय क्या परिस्थितियाँ थी, उसकी क्या मनोदशा थी, जिसने उसे जानलेवा ख़तरा उठाने पर विवश कर दिया यह कवि ने अपनी कल्पना के माध्यम से बताया है। ह्वेनसांग क्यूँकि जिज्ञासु बुद्धि का था, और उसके जीवन में धर्म ग्रंथो का विद्याध्ययन ही सर्वोपरि था। उसकी ज्ञान पिपासा उस पर हावी थी, और उस समय चीन में जो कथाएँ और बौद्ध सूत्र बिखरे हुए थे, ह्वेनसांग उनसे अत्यधिक असंतुष्ट था, वह एक भी क्षण सुख की साँस नहीं ले पाता था। ह्वेनसांग अहर्निश बुद्ध के देश भारत के बारें में सोचता रहता था, और अंततः वह बुद्ध के देश आ ही जाता है। ह्वेनसांग की उस मनोदशा का चित्रण 'अथर्वा' में इस प्रकार मिलता है–"तब उसका मन सब कुछ उलट–पुलट कर देना चाहता था। वह कई दिनों तक घर से बाहर ही नहीं निकलता था। एक तरफ घर गिरस्ती के नेह–नाते और दूसरी और पद्मसम्भव के महादेश की पुकार। वह सोचकर ही बेचौन हो जाता था। वह मन ही मन कल्पना करता था कि आखिर उस देश में जहाँ ब्रह्मसूत्र सर्वत्र बिखरे पड़े हैं उन्हें किस तरह की वैचारिक अग्नि से धारण किया जाता होगा?"4

इस प्रकार ह्वेनसांग अनेक पाण्डुलिपियाँ प्राप्त करता है, और अपने परिश्रम से उन्हें साधता है। दरअसल यह पाण्डुलिपियाँ देश विदेश की यात्राएँ करते हुए ह्वेनसांग तक पहुँचती है। कभी लुटेरों द्वारा चुराकर इन्हें कहीं बेच दिया गया था, कभी किसी भिक्षु, गडरिये, आक्रमणकारी आदि द्वारा इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक पँहुचा दिया गया था, किन्तु अन्त में यह सभी पाण्डुलिपियाँ ह्वेनसांग के पास किसी–न–किसी प्रकार से पहुँच ही जाती है। इस प्रकार भारत से यूनान, रोम, श्रीलंका मिस्र, जेरूसलम इत्यादि देशों तक जाकर भी यह पाण्डुलिपियाँ पुनः ह्वेनसांग को नालंदा, तक्षशिला, उड़ीसा इत्यादि स्थानों पर मिलती रही। ह्वेनसांग को वे सभी ज्ञान प्राप्त होता है, जो बुद्ध से पूर्व के दार्शनिकों अथर्वा, दीर्घतमा, अघमर्षण, प्रजापति परमेष्ठिन्, अनिल, ब्रह्मणस्पति, कपिल इत्यादि ने संकलित किया था।

ह्वेनसांग बौद्ध धर्म में महारथ प्राप्त करता है, और उस धर्म की ऊँचाईयों को स्पर्श करते हुए जीवन के अन्तिम छोर तक पहुँचता है। 'अथर्वा' में दर्शया गया है कि ह्वेनसांग ने अपने अन्तिम ग्रन्थ के लेखन को पूर्ण करने के पश्चात् अपने निब्बान (मृत्यु) की घोषणा की, जिससे चीन के राजा सहित अन्य सभी लोग शोकमग्न हो गए। ह्वेनसांग के लिए एक चिता बनाई गई, जिसमें उसने प्रवेश करके अपनी जीवनलीला समाप्त की। 'अथर्वा' में इसका चित्रण इस प्रकार मिलता है–"अन्दर के सुरभित कक्ष में ह्वेनसांग पद्मासन में बैठ गया और उसने वैभासिकों से सीखी हुई प्रक्रिया के अनुपालन में कुछ क्षणों के लिए अपनी श्वास को स्थिर कर लिया। सामने पद्मसम्भव का मन्त्र जपने वाले भिक्षु धर्मान्तरभाव (बारदों) का आख्यान करने लगे। उस समय ह्वेनसांग में नीलरश्मियों के अन्तर्वलय में अपने आप को देखा।३३वहाँ भगवती महात्रिपुरसुन्दरी के निकट बैठे हुए एक युवक राजकुमार सिद्धार्थ को देखकर उसने तथागत को मन ही मन प्रणाम निवेदित किया और अग्निपंखी गैरिक प्रकाशकाय में प्रवेश कर गया। अन्तर्भाव की क्रिया पूरी होते ही उसका शरीर शान्त हो गया।"5 इतिहास में ह्वेनसांग की मृत्यु के सम्बन्ध में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता है जिस आधार पर इसे कवि–कल्पना मानना ही उचित प्रतीत होता है, किन्तु ह्वेनसांग के बोद्ध धर्म में महारत हासिल करने की बात इतिहास में दर्ज है, जिस कारण इस कल्पना के यथार्थ होने की अत्यधिक सम्भावना बनती है।

ह्वेनसांग के परिनिब्बान से व्यथित इत्सिंग भारत आता है, और ह्वेनसांग के निब्बान की सूचना देता है। ह्वेनसांग के निब्बान की सूचना पाकर सभी बौद्ध भिक्षु मौन हो जाते है, और संघाराम की ओर प्रस्थान करते हैं। इत्सिंग भी उनके साथ जाता है और एक रात स्वप्न देखता है– "इत्सिंग ने स्वप्न देखा कि उप्पलवन नामक थेरी उसे पास के गाँव में बुला रही है जहाँ धानुक गोप का घर है।"6 इत्सिंग को पूछताछ करने पर ज्ञात होता है कि वास्तव में वहाँ एक ऐसा गोप गाँव है, जिसके मन्दिर में एक मंजूषा रखी हुई है। इत्सिंग गोपों के उस गाँव में पहुँचता है, और अपनी आँखों से उस पिटक मंजूषा को देखता है, जिसे लगभग बारह सौं वर्षों से पूजा जा रहा है। उस गोप परिवार द्वारा वह मंजूषा इत्सिंग को भेंट कर दी जाती है, जिसे पाकर इत्सिंग हर्षित हो जाता है, उसे लगता है कि उसने ह्वेनसांग को दिया वचन पूर्ण कर दिया।

ह्वेनसांग को बामियान की पहाड़ी पार करते हुए बुद्ध की ऊँची मूर्तियाँ दिखाई दी थी, जिन्हें गांधार शैली में बनाया गया था। ह्वेनसांग उन मूर्तियों को देखकर हैरान हो गया था। इसी दौरान ह्वेनसांग की मुलाकात एक गडरिया परिवार से होती है। गडरिये परिवार के द्वारा ह्वेनसांग को उचित पात्र मानकर एक मंजूषा प्रदान की जाती है, जिसमें तालिबान द्वारा मूर्तियों को तोड़ने का उल्लेख था, और बुद्ध की वह मूर्तियाँ जिन्हें वे अभी देख कर आया था, इस पाण्डुलिपि पर अंकित थी। ह्वेनसांग उस पाण्डुलिपि को पढ़कर चकित रह जाता है, क्यूँकि उसमें जो भी लिखा था, वह सब तब ही घटित हो रहा था। ह्वेनसांग गडरियें के परिवार को कृतज्ञता ज्ञापित करता है, और उस मंजूषा को चीन में जाकर स्थापित कर देता है। ह्वेनसांग के बहुत समय बाद लगभग तेरहवीं सदी में मार्कोपोलों नामक वेनिस यात्री चीन जाता है, और उस मंजूषा को उठा लाता है। उस समय चीन में कुबला खाँ का शासन था, जिसने मार्कोपोलों से प्रसन्न होकर उसे राजकीय पदवी दी थी, और उसी की आज्ञा से मार्कोपोलो उस पाण्डुलिपि को भारत लेकर आता है। मार्कोपोलो भारत आता है, और तंजौर के राजा को वह पाण्डुलिपि भेंट कर देता है, तत्पश्चात् आपसी युद्धो में वह पाण्डुलिपि विजयनगर साम्राज्य पहुँच जाती है। मार्कोपोलो के चीन जाने के समय वहाँ का राजा कुबला खाँ ही था, और उसको कुबला खाँ ने राजकीय पद भी दिया था इसका वर्णन इतिहास में भी मिलता है, किन्तु वह वहाँ से कोई पाण्डुलिपि या अन्य दस्तावेज लेकर भारत आया था इसका उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता। मार्कोपोलो द्वारा ह्वेनसांग की वह पाण्डुलिपि लाना और तंजौर शासक को भेंट करना कल्पना प्रतीत होती है।

दसवीं सदी में महमूद गजनबी ने ख़्वारिज्म पर कब्जा करके उसे अपना गुलाम बना लिया था। ख़्वारिज्म में अल–बिरुनी नामक एक ज्योतिष और विद्वान् था, जिसे महमूद द्वारा बंदक बनाकर अपने साथ हिन्दुस्तान लाया गया था। अल–बिरूनी के जन्म से पूर्व ही भारतीय ग्रंथो का अरबी फारसी भाषा में अनुवाद हो चुका था, जिसका अध्ययन अल–बिरूनी द्वारा किया गया था। अल–बिरूनी बालपन से ही ज्ञान के स्रोत भारत की ज्ञान के क्षेत्र में प्रशंसा सुनता था, और भारत आकर यहाँ के विद्वानों से बातचीत करने का स्वप्न देखता था। "अल बिरूनी को बहुत छुटपन से ही पता था कि भारत में ऐसी रहस्य में पाण्डुलिपियों है जो मानवता को एक दूसरे ही इतिहास की ओर प्रेरित कर सकती हैं जिनमें खून खराबा नहीं है और ज्ञान विज्ञान की विराट दिशाएँ लरज रही हैं।"7

अल–बिरूनी महमूद गजनबी के द्वारा स्वयं को बंदी बनाकर हिंदुस्तान लाने पर अपना सौभाग्य समझता है, और सुल्तान से छिप–छिपाकर अपने सपने को पूरा करता है। वह रात–दिन हिन्दुस्तान के विद्वानों से बातचीत करता रहता और यहाँ की विद्याओं का ज्ञान अर्जित करता रहता था। अल–बिरूनी इसी प्रकार भारत में रहकर 'किताबुल हिंद' नामक पुस्तक की रचना करता है। एक दिन अल–बिरूनी यूँ ही पुराने किले की तरफ घूमने निकल गया, जहाँ किसी नाथपंथी ने उसको विद्वान् समझकर एक मंजूषा भेंट की। अल–बिरूनी ने उस मंजूषा को खोलकर उसमें निकली पाण्डुलिपि का अध्ययन किया और भयभीत हो गया। उस पाण्डुलिपि में अनागत भविष्य के रहस्य लिखे थे जिसे पढ़कर अलबिरूनी डर जाता है। "वह 'हस्तक्षेप' खण्ड की घटनाओं को पढ़कर अचरज और किंचित् भय से भी भर गया। उसे यह बात समझ में नहीं आ रही थी कि जो बातें अभी तक घटित ही नहीं हुई है उन्हें इसमें कैसे लिख दिया गया है।"8

अल–बिरूनी सुल्तान से गजनी वापस जाने का निवेदन करता है, और सुल्तान की आज्ञा से गजनी वापस चला जाता है। गजनी पहुँचने के पश्चात् अल–बिरूनी को उस पांडुलिपि में लिखी बातें पुनः स्मरण होती है, और वह उस पांडुलिपि को गजनी में ही छोड़कर अपने देश ख्वारिज्म चला जाता है। इस घटना के पश्चात् सदियों साल बाद वह पाण्डुलिपि अनेक पड़ावों से होकर पुन: गजनी में ही आ जाती है। अल–बिरूनी का वर्णन भी 'अथर्वा' में इतिहास के आधार पर किया गया है, किन्तु उसे एक ऐसी पाण्डुलिपि मिलना जिसमें अनागत भविष्य का वर्णन हो, इसे इतिहास नहीं माना जा सकता, हाँ भारत में ऐसी विद्याएँ अवश्य थी जिससे भविष्य की बातें ज्ञात की जाती थी, किन्तु अल–बिरुनी को किसी ऐसी विद्या का मिलना इतिहास में उल्लेखित नहीं मिलता।

इब्नबतूता सुल्तान मोहम्मद बिन तुगलक के समय में मोरक्को से भारत आया था। इब्नबतूता पर इस्लाम धर्म का अत्यधिक प्रभाव था, जिस कारण उसके ह्रदय में मक्का जाने की उत्कट अभिलाषा थी। इब्नबतूता दिन रात मक्का जाने के ख्वाब देखा करता था, और एक स्वप्न जो उसे सदैव दिखाई देता था– "उसे ख्वाब आता था कि हजारों लाखों पन्ने हवा में उड़ते हुए जा रहे हैं और उन्हें पकड़ने के लिए वह उनके पीछे भागता है। भागते–भागते अचानक वह भी हवा में उठ गया है और उन्हें पन्नों में गुम होकर आसमान में कहीं खो गया है।"9 इब्नबतूता मक्का की यात्रा करने के पश्चात् हिंदुस्तान की विद्या की ओर आकर्षित होकर हिंदुस्तान आता है। उसे मक्का जाते समय अपने कारवाँ में कुछ विद्वान साथी मिलते हैं, जिनके मुख से वह श्रामायणश, श्महाभारतश जैसे ग्रंथो के बारे में सुनता है, और हिंदुस्तान की ओर खिंचा चला आता है। इब्नबतूता भारत आकर अनेक ग्रंथो का अध्ययन करता है, सुल्तान तुगलक उसके ज्ञान से प्रसन्न होकर उसको काज़ी की पदवी प्रदान करते हैं।

इब्नबतूता ने इन विद्वानों के मुँह से सोलहवें इल्म के बारे में भी सुना था, जिसमें हिंदुस्तान के हजारों वर्षों का इतिहास संग्रहित था। इब्नबतूता को बौद्ध मठों का भ्रमण करते हुए वह पाण्डुलिपि प्राप्त होती है, जिसमें हिंदुस्तान के हजारों वर्षों का इतिहास संग्रहित था। इब्नबतूता उस मंजूषा को लेकर चीन देश की ओर जाता है, तभी मार्ग में भयंकर तूफान आता है, और लुटेरों के द्वारा उससे वह मंजूषा लूट ली जाती है। किसी प्रकार इब्नबतूता की जान बच जाती है, और उसे अपना वह स्वप्न स्मरण हो आता है–ष्एक मंजूषा को लेकर वह मय सरोसामान चीन जा रहा था कि दिन में ही अँधेरा होने लगा। बहुत तेज तूफान उठा और रास्ते पर अचानक लुटेरों ने उस पर हमला कर दिया और उससे मंजूषा छीन ली डाकुओं ने जब उसे तोड़ा तो उसमें कुछ ताड़पत्र मिले जिसे उन्होंने उसके सामने ही फेंक दिया, जो तूफानी हवा में इधर–उधर फड़फड़ाते हुए उड़ने लगा। इब्नबतूता को अपना सपना याद आ गया। किसी तरह उसकी जान बची उसको तेज पसीना आया और वह हाँफने लगा।"10 'अथर्वा' में इब्नबतूता की बाह्य कथा संरचना ऐतिहासिक है, किन्तु एक स्वप्न जो उसे अक्सर दिखता था, और जो अन्त में सत्य सिद्ध होता है, इसे कवि की कल्पना ही कहा जा सकता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'अथर्वा' में इतिहास और कल्पना दोनों का यह समन्वय हुआ है। कवि ने इतिहास के पात्रों और घटनाओं को उनकी ऐतिहासिक गरिमा के साथ स्वीकार

किया है, किन्तु उनकी कहानियों को कल्पना के माध्यम से गढ़ा है। 'अथर्वा' में सभी ऐतिहासिक पात्र अपने देशकाल और वातावरण के अनुकूल ही उपस्थित हुए हैं, उनके भारत आगमन के समय, उनके भारत आने के उद्देश्य, इतिहास से ज्यों–के त्यो–लिये गए हैं। ऋषि अथर्वा द्वारा लाई गई विद्या तक उनकी पहुँच, और उस विद्या को प्राप्त करने के पीछे की कथा नि:सन्देह कवि ने कल्पना के आधार पर ही रची है।

संदर्भ सूची

1. सिंह आनन्द कुमार, 'अथर्वा', नयी किताब प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण: 2021, पृ. सं. 27
2. वहीं पृ. सं. 25
3. वहीं पृ. सं. 40
4. वहीं पृ. सं. 139
5. वहीं पृ. सं. 316
6. वहीं पृ. सं. 317
7. वहीं पृ. सं. 236
8. वहीं पृ. सं. 237
9. वहीं पृ. सं. 279
10. वहीं पृ. सं. 281